टिप्पणी

11

वैशेषिक दर्शन

''योगाचारविभूत्या यस्तोषयित्वा महेश्वरम्।
चक्रे वैशेषिकं शास्त्रं तस्मै कणभुजे नमः॥'' (प्रशस्तपादभाष्य)

प्रस्तावना

छः आस्तिक दर्शनों में वैशेषिक दर्शन अन्यतम है। वैशेषिक दर्शन के अन्य नाम भी हैं। यथा- कणाद दर्शन, औलूक्य दर्शन, काश्यपीय दर्शन। इस दर्शन के प्रवक्ता महर्षि कणाद हैं। जो निश्चित स्थानान्तर पर कणभुक्, कर्णभक्ष, उलूक, काश्यप, योगी इत्यादि नामों से जाने जाते हैं। यह वैशेषिक दर्शन न्याय शास्त्र से भी प्राचीनतम है। पदार्थ विभाजन तथा परमाणुवाद प्रवर्तन वैशेषिक दर्शन के विशेष हैं। और भी नव्यन्यायशास्त्र का परिपूरक शास्त्र यह कणाद प्रवर्तित वैशेषिक दर्शन है। इस दर्शन का प्रशंसावाचक प्रवाद भी पण्डित समाज में प्रचलित है- ''काणादं पाणिनीयञ्च सर्वशास्त्रोपकारकम्''।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे:

- वैशेषिक दर्शन न्याय दर्शन के समान तन्त्र जान पाने में;
- वैशेषिक नाम का तात्पर्य जान पाने में;
- वैशेषिक दर्शन का काल जान पाने में;
- कणाद प्रणीत ग्रन्थ का परिचय प्राप्त कर पाने में;
- वैशेषिक दर्शन की आचार्य परम्परा को जान पाने में;

टिप्पणी

- वैशेषिक पदार्थतत्व को जान पाने में;
- वैशेषिक प्रमाणतत्व को जान पाने में;
- परमाणुवाद को जान पाने में।

11.1 न्यायदर्शन के समान तन्त्र

यह दर्शन न्याय शास्त्र के समान तन्त्र ही है। यहा समान पद सादृश्यार्थक है। और तन्त्रपद सिद्धान्तवाची अथवा शास्त्रवाची है। अमरकोष में उक्त हैं- ''तन्त्रं प्रधाने सिद्धान्ते सूत्रवापे परिच्छदे''। न्यायदर्शन के साथ वैशेषिक दर्शन सिद्धान्तगत सादृश्य ही प्रधान है। और जो दोनों वैजात्य दिखता है, वह गौण है। जैसे न्यायदर्शन में ही प्रमाण तत्व प्रधान है किन्तु वैशेषिक दर्शन में प्रमेय तत्व प्रधान है। न्यायमत में सोलह पदार्थ हैं और वैशेषिक मत में सात पदार्थ हैं। न्यायमत में चार प्रमाण हैं और वैशेषिक दर्शन में दो प्रमाण हैं। इस प्रकार वैसादृश्य होने पर भी दोनों शास्त्रों का सादृश्य अस्वीकार है। वैसे भी वैशेषिकों के सात पदार्थ न्याय सम्प्रदाय में अवान्तर पदार्थ के रूप में स्वीकृत हैं। वैसे ही भाष्य में-

> **''अस्त्यन्यदीप द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायाः प्रमेयम्, तद्भेदेन चापरिसंख्येयम्।''**

न्याय के सोलह पदार्थ वैशेषिकों द्वारा प्रकारान्तर से स्वीकृत हैं। यथा न्याय का संशय पदार्थ वैशेषिक के गुण के अन्तर्गत है। वैशेषिकों के प्रत्यक्ष और अनुमान दो प्रमाण न्याय के प्रत्यक्ष, अनुमान से अभिन्न है। वैशेषिक उपमान और शब्द, दो प्रमाण भी अनुमान के अन्तर्गत मानते हैं। और भी मुक्ति के विषय में दोनों एकमत हैं। यहाँ दोनों मिथ्या ज्ञान की निवृत्ति और दु:ख-निवृत्ति स्वीकृत है। परमाणु ही पञ्चमहाभूतों के उपादान है, दोनों सहमत हैं। और दोनों सम्प्रदाय असत्कार्यवाद और आत्मा का बहुत्व एवं सगुणत्व स्वीकार करते हैं। अत: वैशेषिक दर्शन न्याय दर्शन के समानतन्त्र कहलाता है।

11.2 वैशेषिक नामकरण

'अधिकृत्य कृते ग्रन्थे', इस सूत्र द्वारा विशेष शब्द से ठक्-प्रत्यय के योग में निष्पन्न वैशेषिक शब्द कणाद प्रवर्तित शास्त्र का वाचक है। विशेष को अधिकृत किया हुआ ग्रन्थ, यह अर्थ है। और वह विशेष पदार्थ निरूपक ग्रन्थ है। इस शास्त्र का विशेष क्या है? तो कहते हैं- कणाद प्रवर्तित इस शास्त्र में 'विशेष' पदार्थ स्वीकृत है। जो निश्चय ही भेद बुद्धि का जनक है। यह विशेष पदार्थ ही वैशेषिक शास्त्र का विशेष है। कुछ कहते हैं कि परमाणु अथवा कण वैशेषिक दर्शन का विशेष है। और शारीरिकभाष्य में- ''न च अकारेण कार्येण भवितव्यमिति अत: परमाणव: जगत: कारणम् इति

टिप्पणी

कणभुगभिप्रायः।'' अतः विशेष पदार्थ को स्वीकार करने से अथवा परमाणुवाद के प्रवर्तन से इस शास्त्र का वैशेषिक अभिधा, ऐसा कहना युक्त है।

11.3 वैशेषिक दर्शन का काल

वैशेषिक दर्शन अतीव प्राचीन दर्शन है। इसके आरम्भकाल के विषय में निश्चित रूप में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। वेदान्त, मीमांसा आदि शास्त्रों में परमाणुवाद आदि वैशेषिक मत खण्डित दिखते हैं। और वैशेषिक शास्त्र में न्याय मत प्राप्त नहीं होता है। किन्तु न्याय भाष्य आदि में वैशेषिक मत सुलभ है। और उसके द्वारा वैशेषिक दर्शन इन दर्शनों से प्राचीनतर प्रतीत होता है। सतीशचन्द्रविद्याभूषण महोदय के मत में वैशेषिकसूत्रों का आनुमानिक काल छठी शताब्दी ईसा पूर्व है।

11.4 सूत्रग्रन्थ परिचय

कणाद प्रणीत वैशेषिक-सूत्र ग्रन्थ में दस अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में दो आह्निक होते हैं। समग्र ग्रन्थ का मूल उद्देश्य तत्वज्ञान है। और तत्वज्ञान का फल मुक्ति है। और वैशेषिक सूत्र में- ''धर्मविशेषप्रसूताद् द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायां पदार्थानां साधर्म्यवैधर्म्याभ्यां तत्वज्ञानान्निः श्रेयसम्''।

वैशेषिक मत में जड़ पदार्थ के तत्व ज्ञान को छोड़कर आत्म-तत्व का ज्ञान नहीं होता है। अतः मुक्ति के लिए आत्मतत्व की ज्ञान प्राप्ति के लिए वैशेषिक दर्शन में जड़ पदार्थों की भी विस्तार से आलोचना विहित है। तथा नीचे अध्याय क्रम से वैशेषिक सूत्र ग्रन्थ का विषय संक्षेप में प्रदान किया गया है-

अध्याय	आह्निक	विषय
1.	1.	धर्मलक्षण, द्रव्य आदि पदार्थ का लक्षण
	2.	कार्यकारणभावविचार, सत्तादि जाति वर्णन
2.	1.	पृथिवी आदि द्रव्य लक्षण
	2.	कालनिरूपण, शब्दनिरूपण
3.	1.	आत्मानुमान, हेतात्वाभास
	2.	मनोनिरूपण, प्रकारान्तर द्वारा आत्मानुमान, आत्मा की नित्यता
4.	1.	परमाणुकारणतावाद, रूप आदि प्रत्यक्ष वर्णन
	2.	कर्मविचार

5.	1.	अनित्यद्रव्यविभाग
	2.	भूमिकम्पन आदि का हेतु, अन्धकार निरूपण
6.	1.	वेद का ईश्वर कर्त्तृत्व
	2.	वैधकर्मफल, धर्माधर्महेतु, पुनर्जन्म, मोक्षोपाय
7.	1.	रूप आदि की नित्यता और अनित्यता, परिमाण विचार
	2.	संख्यादि विचार, पदपदार्थ सम्बन्ध विचार, समवाय
8.	1.	ज्ञानप्रकरण, प्रत्यक्ष हेतु निर्देश
	2.	विशिष्ट प्रत्यक्ष हेतु
9.	1.	अभाव प्रत्यक्ष प्रकरण, योगज प्रत्यक्ष
	2.	अनुमान, शब्दबोध का अनुमानत्व, अविद्या, विद्या
10.	1.	सुखदु:ख विचार
	2.	कारणत्रय का उपदेश, वेदप्रामाण्य

पाठगत प्रश्न 11.1

1. वैशेषिक दर्शन के प्रवक्ता कौन हैं?
2. वैशेषिक दर्शन का विशेषत्व क्या है?
3. महर्षि कणाद् के दो अपर नाम क्या हैं?
4. वैशेषिक दर्शन किस दर्शन के समान तन्त्र है?
5. न्याय-वैशेषिक दर्शनों का एक सादृश्य लिखें।
6. न्याय-वैशेषिक दर्शनों का एक वैशादृश्य लिखें।
7. वैशेषिक दर्शन का 'वैशेषिक' कैसे होता है?
8. वैशेषिक सूत्र का उद्भव किस समय में हुआ?
9. वैशेषिक सूत्र में कितने अध्याय हैं?
10. वैशेषिक शास्त्र का मूल उद्देश्य क्या है?

टिप्पणी

11.5 आचार्य परम्परा

कणाद् प्रणीत जो वैशेषिक दर्शन है, उसके कितने आचार्य थे, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। कुछ वैशेषिक ग्रन्थों के नाम मात्र सुने गए हैं किन्तु उनके रचयिता कौन हैं, यह ज्ञान नहीं है। यथा 'वैशेषिकवाक्य' वार्तिक और 'वैशेषिक कटन्दी' ग्रन्थ हैं। जब भी हो, अभी कुछ वैशेषिक आचार्यों के नाम तथा उन ग्रन्थों के नाम कालचक्र से उपस्थापित हैं-

क्रमाय	आचार्य	ग्रन्थ	काल (आनुमानिक) ईशवीय शतक
1.	कणाद् मुनि	वैशेषिक सूत्र	छठी (ईसा पूर्व)
2.	प्रशस्तपाद	पदार्थधर्मसंग्रह / प्रशस्तपादभाष्य	तृतीय (ईसा पूर्व)
3.	व्योमशिवाचार्य	व्योमवती	सप्त (ईस्वी)
4.	श्रीधरभट्ट	न्यायकन्दली (भाष्यटीका)	दसवीं (ईस्वी)
5.	उदयनाचार्य	किरणावली (भाष्यटीका)	ग्यारहवीं ईस्वी
6.	वल्लभाचार्य	न्यायलीलावती	बारहवीं ईसवी
7	शिवादित्याचार्य	सप्तपदार्थी	बारहवीं ईस्वी
8.	केशवमिश्र	तर्कभाषा	तेरहवीं ईस्वी
9.	शंकरमिश्र	वैशेषिक सूत्रोपस्कार	पन्द्रहवीं ईस्वी
10.	रघुनाथ शिरोमणि	पदार्थतत्वनिरूपण (दीधिति)	सोलहवीं ईस्वी
11.	प्रगल्भाचार्य	प्रागल्भा (लीलावती)	सोलहवीं ईस्वी
12.	पद्मनाभमिश्र	सेतुटीका	सोलहवीं शताब्दी ईस्वी
13.	अन्नम्भट्ट	तर्कसंग्रह	सत्रहवीं शताब्दी ईस्वी
14.	विश्वनाथाचार्य	भाषपरिच्छेद	सत्रहवीं शताब्दी ईस्वी
15.	पञ्चाननतर्क रत्न	परिष्कार (उपस्कारटीका)	बीसवीं शताब्दी ईस्वी

पाठगत प्रश्न 11.2

1. प्रशस्तपाद द्वारा रचित ग्रन्थ का नाम क्या है?
2. व्योमवती किसकी रचना है?
3. किरणावली किसके द्वारा विरचित है?

4. न्यायकन्दली के प्रणेता कौन हैं?
5. उपस्कारग्रन्थ किसके द्वारा विरचित है?
6. सेतुटीका के टीकाकार कौन हैं?
7. विश्वनाथ आचार्य के ग्रन्थ का नाम क्या है?
8. अन्नम्भट्ट के द्वारा प्रणीत ग्रन्थ का नाम क्या है?
9. न्यायलीलावती किसकी रचना है?
10. केशवमिश्र कौन हैं?

वैशेषिक मत में पदार्थ

वैशेषिक दर्शन में सप्त पदार्थ स्वीकृत हैं, अतः वे वैशेषिक सप्तपदार्थवादी कहे जाते हैं। यद्यपि कणाद्-सूत्र में छः पदार्थों का उल्लेख दिखता है, वहाँ अभाव का उद्देश्य नहीं है, तथापि नवम् अध्याय में प्राग्भाव का स्वरूप उक्त है। और उदयनाचार्य द्वारा अभाव सप्त पदार्थ के रूप में गृहीत है। और भी, यह वक्तव्य है कि अभाव पदार्थ भावपद के ज्ञानाधीन है। उसके कारण अभाव का पृथक् उल्लेख सूत्र में नहीं है। न्यायकन्दलीकार ने कहा है-

''अभाव पृथगनुपदेशो भावपारतन्त्रयात्, न त्वभावात्।''

वैशेषिक मत में सप्त पदार्थ ही है। और वे पदार्थ हैं- द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव। उसमें द्रव्य नौ ही हैं। वे हैं- पृथिवी, आप, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मन। गुण चौबिस हैं। और वे हैं- रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, गुरूत्व, द्रवत्व, स्नेह, शब्द, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म, संस्कार। कर्म पाँच होते हैं। और वे हैं- उत्क्षेपण, अपक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन। सामान्य दो प्रकार का है। और वह पर और अपर है। विशेष अनन्त हैं। समवाय एक ही है। अभाव के चार भेद हैं। और वे प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अत्यन्ताभाव और अन्योन्याभाव।

11.7 द्रव्य

सप्त पदार्थो में द्रव्य ही गुण, कर्म आदि के आश्रयत्व द्वारा प्रधान है। उसके कारण उसका प्रथमतः उल्लेख है। ''क्रियागुणवत् समवायिकारणमिति द्रव्यलक्षणम्।'' (1/1/15) कर्माश्रय, गुणाश्रय, अथवा उनका समवायिकारण द्रव्य है। अर्थात् जिस पदार्थ में समवाय द्वारा गुण अथवा कर्म रहता जो भावकार्यमात्र का समवायिकारण होता है, वह द्रव्य है। और वे नव द्रव्य हैं- पृथिवी, आप, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मन।

टिप्पणी

'तमः खलु चलं नीलं परापरविभागवत्' इस प्रकार मीमांसक तमस् को दसवाँ द्रव्यत्व कहते हैं। किन्तु न्याय मत में तम पृथक् द्रव्य नहीं है, उसके अभाव में ही अन्तर्गत होने के कारण। वस्तुतः तम प्रौढप्रकाशक तेजस का अभाव ही है। 'तम चलता है, यह प्रत्यय तो भ्रम है। जिस द्रव्य में कर्म होता है, वह मूर्त कहलाता है। अथवा जिस द्रव्य का परिमाण परिच्छिन्न होता है, वह द्रव्य मूर्त है। मूर्त से भिन्न द्रव्य विभु है। सर्वमूर्त द्रव्य के साथ जिसका संयोग होता है, वह सर्वमूर्तद्रव्यसंयोगी विभु द्रव्य है। आकाश, काल, दिक् आत्मा विभु द्रव्य हैं। अन्य सभी मूर्त ही है।

11.7.1 पृथिवी

'गन्धवती पृथिवी'। गन्धवत्व पृथिवी का लक्षण है। पृथिवीत्व जाति का गन्ध विशेष गुण कहा गया है अथवा जिस द्रव्य में समवाय द्वारा है, वह पृथिवी है। शरीर, इन्द्रिय, विषय, इस भेद से पृथिवी तीन प्रकार की है। शरीर मनुष्य आदि जन्तुओं का है। इन्द्रिय घ्राण है, नासिका के अग्र में वर्तमान और ग्रन्ध-ग्रहण में साधनभूत होता है। विषय मृत्, पाषाण, वृक्ष आदि हैं। कार्यरूप पृथिवी अनित्य है। किन्तु पृथिवी का परमाणु नित्य है। पृथिवी के रूप, रस, गन्ध और स्पर्श चार पाकज विशेष गुण रहते हैं। 'पाक' वेज संयोग है। और संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, गुरूत्व, द्रवत्व और संस्कार दस सामान्य गुण पृथिवी में होते हैं।

11.7.2 आप

'शीतस्पर्शवत्य आपः'। जिन द्रव्यों में शीतस्पर्श रूपी गुण रहता है, वह आप (जल) है। अप्त्व सामान्य युक्त आप है। शरीर, इन्द्रिय, और विषय के भेद से आप तीन प्रकार के हैं। शरीर जलीय वरूण लोक में है। इन्द्रिय रसना, जिह्वा में होती है और रस ग्रहण में साधनभूत होता है। विषय सरिता, समुद्र आदि हैं। कार्यरूप आप अनित्य है। आप के परमाणु नित्य है। आप में भी पृथिवीवत् चौदह गुण रहते हैं। पृथिवी में जहाँ गन्ध विशेष गुण है यहाँ आप में स्नेह विशेष गुण है, यह भेद है।

11.7.3 तेज

'उष्णस्पर्शवत्तेजः तेजः'। जिस द्रव्य में 'उष्ण स्पर्श' गुण रहता है, वह तेज है। अथवा तेजस्त्व जाति युक्त तेज है।

शरीर, इन्द्रिय और विषय भेद से तेज तीन प्रकार के हैं। शरीर तैजस आदित्यलोक में है। इन्द्रिय चक्षु, कृष्णतारा अग्रवर्ती है, रूप ग्रहण में साधन होता है। विषय, भौम, दिव्य, औदर्य, आकरज के भेद से चार प्रकार का है। भौम वह्नि (अग्नि) खद्योत आदि है, दिव्य सूर्य, विद्युत आदि, औदर्य भुक्त अन्न आदि के रस आदि के रस आदि रूप

में परिणाम हेतु, और आकरज सुवर्ण आदि है। कार्यरूप तेज अनित्य है। तैजस परमाणु नित्य है। तेज में रूप और स्पर्श दो विशेष गुण रहते हैं। संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, द्रवत्व और संस्कार नौ सामान्य गुण रहते हैं।

11.7.4 रूपरहितस्पर्शवान् वायुः

'रूपरहितस्पर्शवान् वायुः'। जिस द्रव्य का रूप नहीं है किन्तु स्पर्श होता है वह द्रव्य वायु है अथवा वायुत्व जाति से युक्त वायु है। और वह वायु अनुष्णाशीत स्पर्श आदि द्वारा अनुमेय है। शरीर, इन्द्रिय, और विषय के भेद से वायु त्रिविध है। वायवीय शरीर वायुलोक में है। इन्द्रिय त्वक्, सर्वशरीर में होता है, और स्पर्शग्रहण में साधन होता है। विषय वृक्ष आदि के कम्पन का हेतु है। शरीर की अन्तः सञ्चारी वायु प्राण कहलाती है। और वह उपाधिभेद से प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान पाँच प्रकार का है। कार्यरूप वायु अनित्य है। और परमाणु रूप वायु नित्य है। वायु में स्पर्श, एक विशेष गुण है तथा संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व और वेग (संस्कार) आठ सामान्य गुण रहते हैं।

11.7.5 आकाश

'शब्दगुणकम् आकाशम्'। जिस द्रव्य में 'शब्द' विशेष गुण समवाय में रहता है, वह द्रव्य आकाश है। और वह आकाश नित्य, विभु परिमाण और एक है। नित्य सृष्टि–विनाश रहित है। विभु सर्वमूर्त द्रव्य संयोगी है। परिच्छिन्न परिमाणवत् अथवा क्रियावत् द्रव्य मूर्त है। क्योंकि आकाश के परिमाण की इयत्ता नहीं है, उससे वह विभुपरिमाण, अमूर्त है। विभु होने से आकाश सर्वव्यापी है। आकाश के भेद में प्रमाण नहीं है, अतः वह एक है। आकाश में शब्द विशेष गुण है तथा संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग और विभाग पाँच सामान्य गुण रहते हैं। शब्दाश्रयत्व के द्वारा परिशेष अनुमान से आकाश की सिद्धि होती है।

11.7.6 काल

'अतीतादिव्यवहारहेतु कालः'। लोक में अतीत, वर्तमान भविष्य, सम्वत्सर, मास, दिन इत्यादि शब्दों के प्रयोग का हेतु काल है। काल एक होने पर भी उपाधिभेद से अनेक है। और वह काल नित्य, विभु परिमाण विशिष्ट है। काल में संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग और विभाग पाँच सामान्य गुण रहते हैं। दिक्, परत्व, अपरत्व के विपरीत धर्म हेतु द्वारा काल की सिद्धि होती है। काल जगत का आधार है और कार्यमात्र का निमित्त कारण है। जन्यमात्र काल की उपाधि है।

11.7.7 दिक्

'प्राच्यादिव्यवहारहेतुः दिक्'। लोक में प्राची, प्रतीची, अदीची, अवाची शब्दों के प्रयोग का हेतु दिक् है। और वह दिक् एक भी सूर्यतद्देशसंयोगोपाधि के भेद से प्राची आदि होते हैं। दिक् (दिशा) उत्पत्ति, विनाश से रहित नित्य और विभु है। दिशा में कालवत् संख्या, परिमाण, पृथक्त्व संयोग और विभाग, पाँच सामान्य गुण होते हैं। कालकृत परत्व-अपरत्व के विपरीत धर्म के हेतुत्व द्वारा दिक् की सिद्धि होती है। और दिक् काल के समान कार्यमात्र का निमित्त कारण है। सभी मूर्त दिशा उपाधि है।

11.7.8 आत्मा

'ज्ञानाधिकरणम् आत्मा'। ज्ञान का आश्रय आत्मा है। ''ज्ञान समवाय द्वारा जिस द्रव्य में रहता है वह द्रव्य आत्मा है। और वह आत्मा नित्य और विभु है। जीवात्मा और परमात्मा के भेद से आत्मा दो प्रकार का है। सुख, दुःख आदि के वैचित्र्य से जीवात्मा प्रति शरीर में भिन्न होती है। किन्तु परमात्मा ईश्वर एक और सर्वज्ञ है। जीवात्मा में संख्या आदि पाँच सामान्य गुण तथा बुद्धि (अनित्य ज्ञान), सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म और संस्कार नौ विशेष गुण रहते हैं। 'क्षिति, अङ्कुर सकर्तृक हैं, कार्य होने से'', इस अनुमान द्वारा पृथिवी सकर्तृक है (पृथिवी का कोई कर्त्ता है), यह सिद्ध होता है। और वह कर्त्ता कौन है, यह जिज्ञासा में परिशेषानुमान से ईश्वर की सिद्धि होती है।

11.7.9 मन

'सुखाद्युपलब्धिसाधनम् इन्द्रियं मनः''। सुख, दुःख, ज्ञान, इच्छा इत्यादि की उपलब्धि में जो साधन है, वह इन्द्रिय मन है। चक्षु आदि बाह्य इन्द्रियाँ हैं। मन तो आन्तरिक इन्द्रिय है। और वह प्रत्येक पुरूष (व्यक्ति) में भिन्न, अणु परिमाण और नित्य होता है। युगपत् ज्ञान की उत्पत्ति नहीं होती है, और उससे मन का अणु परिमाण सिद्ध होता है। और ज्ञान रूप कार्य की उत्पत्ति में आरम्भ में आत्मा मन से संयुक्त होता है, वह मन इन्द्रिय द्वारा (चक्षु आदि ज्ञानेनिन्द्रय द्वारा) संयुक्त होता है और वह इन्द्रिय अर्थ द्वारा संयुक्त होता है। उसके बाद ही किसी भी पुरूष का ज्ञान उत्पन्न होता है। यही ज्ञानोत्पत्ति का क्रम है। क्योंकि सुषुप्ति काल में अणु परिमाण मन पूरीतत नाड़ी में प्रवेश करता है। उससे सुषुप्ति में आत्मा मन के साथ तथा मन इन्द्रिय के साथ संयुक्त नहीं होता है। और उसके कारण सुषुप्ति में ज्ञान उत्पन्न नहीं होता। मन के आठ सामान्य गुण होते हैं। और वे संख्या, परिमाणा, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व और संस्कार है।

पाठगत प्रश्न 11.3

1. वैशेषिक दर्शन में कितने पदार्थ स्वीकृत हैं?
2. वैशेषिक दर्शन के सात पदार्थ क्या हैं?
3. द्रव्य लक्षण क्या है?
4. भाव कार्यमात्र का समवायिकारण क्या है?
5. द्रव्य कितने हैं? उनके नाम लिखें।
6. पृथिवी का विशेष गुण क्या है?
7. 'पाक' शब्द का अर्थ क्या है?
8. पृथिवी के सामान्य गुण कितने हैं?
9. आप (जल) में किस प्रकार का स्पर्श विद्यमान है?
10. तेज में किस प्रकार का स्पर्श विद्यमान है?
11. तेज कितने प्रकार का है?
12. आकरज तेजस का उदाहरण दें।
13. तैजस-इन्द्रिय क्या है?
14. वायु का लक्षण क्या है?
15. प्राण वायु कौन-सी है?
16. उपाधि के भेद से वायु कितने प्रकार का है?
17. नित्य वायु क्या है?
18. आकाश का विशेष गुण क्या है
19. आकाश का वैशिष्ट्य क्या है?
20. आकाश की सिद्धि कैसे होती है?
21. जगत का आधार क्या है?
22. काल के सामान्य गुण क्या हैं?
23. काल कार्यमात्र का किस प्रकार कारण होता है?
24. दिशा का परिमाण क्या है?

टिप्पणी

25. आत्मा का लक्षण क्या है?
26. आत्मा कितने प्रकार का है?
27. नित्य ज्ञान जीवात्मा का गुण है अथवा परमात्मा का है?
28. जीवात्मा के विशेष गुण क्या है?
29. मनस् का क्या लक्षण है?
30. मन का परिमाण किस प्रकार का है?
31. सुषुप्तिकाल में मन कहाँ प्रवेश करता है?

11.8 गुण

'द्रव्यकर्मभिन्नत्वे सति सामान्यवान् गुणः' (द्रव्य, कर्म से भिन्न होने पर सामान्य से युक्त गुण है।) जो न द्रव्य है अथवा न कर्म है किन्तु सामान्यवान् है, वह पदार्थ गुण है। गुणत्व जाति से युक्त गुण है। वस्तुतः सामान्य केवल द्रव्य, गुण, कर्म वृत्तियों वाला होता है। अतः जो सामान्यवान् पदार्थ द्रव्य, कर्म से भिन्न है, वह गुण होता है। और वे गुण द्रव्य पर आश्रित असमवायिकारण स्वरूप होता है। वैशेषिक मत में सम्पूर्ण गुण चौबीस प्रकार के हैं। और वे हैं- रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, गुरूत्व, द्रवत्व, स्नेह, शब्द, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म और संस्कार।

11.8.1 रूप

चक्षु मात्र ग्राह्य विशेष गुण रूप है। वह भी शुक्ल-नील-पीत-रक्त (लाल)-हरित-कपिश-चित्र भेद से सात प्रकार का है। रूप पृथिवी आदि पदार्थों में तीन वृत्तियों वाला है। पृथिवी में पाकज रूप, और जल, तेज में अपाकज होता है।

11.8.2 रस

रसना इन्द्रिय द्वारा ग्राह्य विशेष गुण रस है। रस छः प्रकार का है- मधुर, अम्ल, लवण, कटु, कषाय और तिक्त। वह पृथिवी, जल वृत्ति युक्त है। पृथिवी में पाकज छः रस हैं। जल में अपाकज मधुर ही रस होता है। गुड़, शर्करा आदि रस हैं। चिञ्च आदि रस अम्ल हैं। मरीच, मर्मिका, शुण्ठय आदि रस कटु हैं। सेन्धव आदि लवण रस लवण हैं। जम्बू हरीतक्य आदि रस कषाय हैं। निम्ब-कारवेल्ल आदि रस तिक्त हैं।

11.8.3 गन्ध

घ्राण द्वारा ग्राह्य विशेष गुण गन्ध है। वह दो प्रकार का है- सुरभि और असुरभि। गन्ध पृथिवीमात्र वृत्ति है अर्थात् पृथिवी मात्र में रहता है। जल आदि में जो गन्ध का अनुभव होता है, वह पृथिवी का ही है, जल आदि का नहीं।

11.8.4 स्पर्श

त्वक् इन्द्रिय द्वारा ग्राह्य विशेष गुण 'स्पर्श' है। और वह तीन प्रकार का है- शीत, उष्ण तथा अनुष्णाशीत। स्पर्श पृथिवी आदि चतुष्ट्य वृत्ति युक्त है। शीतस्पर्श जल में, उष्णस्पर्श तेज में, और अनुष्ण शीत स्पर्श पृथिवी-वायु में है।

11.8.5 संख्या

'एकत्वादिव्यवहारहेतुः सामान्यगुणः' (अर्थात् एकत्व आदि व्यवहार का हेतु सामान्य गुण (संख्या) है।' एक, दो, इत्यादि संख्यावाचक शब्दों के प्रयोग का हेतु संख्या है। सभी द्रव्यों में रहता है, अतः संख्या सामान्य गुण है। संख्या नित्यगत नित्य और अनित्यगत अनित्य है। अर्थात् आकाश, काल इत्यादि नित्य द्रव्यों की संख्या नित्य तथा अनित्य घट आदि की संख्या अनित्य है। वह एकत्व आदि परार्ध पर्यन्त है। द्वित्व आदि सर्वत्र अनित्य ही है।

11.8.6 परिमाण

मान के व्यवहार का असाधारण कारण परिमाण है। परिमाण नव द्रव्यों में रहने वाला सामान्य गुण है। वह चार प्रकार का है - अणु, महत्, ह्रस्व और दीर्घ। पृथिवी आदि के परमाणुओं और मनस का अणु परिमाण है। महत् परिमाण दो प्रकार का है - मध्यम महत् और परम महत्। अनित्य द्रव्यों का मध्यम महत् परिमाण होता है, आकाश, काल, दिक् और आत्मा, इन नित्य द्रव्यों का परम महत् परिमाण होता है। ह्रस्वत्व परिमाण विशिष्ट ह्रस्व और दीर्घत्व परिमाण विशिष्ट दीर्घ है।

11.8.7 पृथक्त्व

'यह इससे पृथक् है' इत्यादि में पृथक शब्द के प्रयोग का असाधारण कारण पृथक्त्व है। यह सभी द्रव्यों में रहता है। यह सामान्य गुण है।

11.8.8 संयोग

'संयुक्त व्यवहार का हेतु संयोग है'। 'ये दोनो संयुक्त हैं' इत्यादि में संयुक्त शब्द के प्रयोग का जो हेतु है, वह संयोग है। संयोग दो प्रकार का है- कर्मज और संयोगज। कर्मज भी दो प्रकार का है- अन्यतरकर्मज और उभायकर्मज। क्रिया द्वारा हाथ और पुस्तक का संयोग अन्यतरकर्मज है। उस संयोग के द्वारा उत्पन्न शरीर-पुस्तक का संयोग संयोगज है। करमर्दन काल में दोनों हाथों की क्रिया द्वारा दोनों हाथों का संयोग उभयकर्मज है। युद्धमान दो मेषों (बैल) का संयोग उभयकर्मज है। और वह संयोग सभी द्रव्यों में रहने वाला सामान्य गुण है। संयोग जिस अधिकरण में होता है, उस अधिकरण में उसका अत्यन्ताभाव भी होता है। अत: संयोग को अव्याप्यवृत्ति भी कहते हैं।

11.8.9 विभाग

विभक्त व्यवहार का हेतु विभाग है। 'ये दोनों विभक्त हैं, इस उपलब्ध उदाहरण में असाधारण कारण विभाग है। और वे संयोगनाशक सभी द्रव्यों में रहने वाला सामान्य गुण है। विभाग दो प्रकार का है- कर्म और विभागज। कर्मज भी दो प्रकार का है - अन्यतरकर्मज और उभयकर्मज। हस्तक्रिया के द्वारा हस्त-पुस्तक का विभाग अन्यतरकर्मज है, और काय-पुस्तक का विभाग विभागज है। अपनी क्रियाओं का और मल्लयोद्धाओं का विभाग उभयकर्मज विभाग है।

11.8.10 परत्व

11.8.11 अपरत्व

पर और अपर शब्दों के व्यवहार का असाधारण कारण परत्व और अपरत्व है। ये दो गुण पृथिवी आदि और मन में होते हैं। परत्व और अपरत्व दो प्रकार दिक्कृत और कालकृत में हैं। दूरस्थ दिक्कृत ज्येष्ठ में और कालकृत परत्व होता है। समीपस्थ में दिक्कृत कनिष्ठ में और कालकृत अपरत्व रहता है। कालकृत परत्व-अपरत्व जन्य में ही होते हैं। दिक्कृत परत्व-अपरत्व में मूर्त में ही होते है।

11.8.12 गुरूत्व

पृथिवी आदि के आद्यपतन का असमवायिकारण गुरूत्व है। वह पृथिवी और जल में रहने वाला गुण है।

11.8.13 द्रवत्व

पृथिवी के आद्य स्यन्दन का असमवायिकारण द्रवत्व है। वह पृथिवी, तेज, जल में रहने वाला गुण है। द्रवत्व दो प्रकार का है सांसिद्धिक और नैमित्तिक है। जल में सांसिद्धिक द्रवत्व और पृथिवी-तेज में नैमित्तिक द्रवत्व होता है।

11.8.14 स्नेह

''चूर्णादिपिण्डीभावहेतुः गुणः स्नेहः''। जिस गुण के द्वारा चूर्ण पिण्डीभूत होता है, वह स्नेह है। वह केवल जल में रहता है।

11.8.15 शब्द

''श्रोत्र के द्वारा ग्राह्य गुण 'शब्द' है। और वह आकाश का विशेष गुण है। शब्द दो प्रकार का है- ध्वन्यात्मक और वर्णात्मक। पहला भेरी आदि में, और द्वितीय संस्कृत भाषा आदि स्वरूप है। उत्पत्ति के भेद से ध्वन्यात्मक शब्द तीन प्रकार का है - संयोगज, विभागज और शब्दज। भेरी-दण्ड संयोग से उत्पन्न शब्द संयोगज है। अंगुली-तन्त्री के विभाग से उत्पन्न विभागज है। वंश पाव्यमान में उत्पन्न शब्द विभागज है। भेरी आदि देश आरम्भ होकर श्रोत्र पर्यन्त द्वितीय आदि शब्द शब्दज हैं। वैशेषिक मत में शब्द अनित्य है। एक उत्पन्न शब्द अन्य शब्द को उत्पन्न कर नष्ट हो जाता है। भेरी देश में उत्पन्न शब्द वीचीतरंग न्याय अथवा कदम्बकोरक न्याय द्वारा शब्दान्तर को उत्पन्न करता है। और वह शब्द शब्दान्तर क्रम से श्रोत्रदेश में उत्पन्न अन्त्य शब्द श्रोत्र द्वारा ग्रहण होता है। और उससे शब्द का प्रत्यक्ष होता है। कर्णशष्कुली अवच्छिन्न नभ श्रोत्र है।

11.8.16 बुद्धि

सभी शब्दों का प्रयोग जिस कारण से होता है, वह कारण बुद्धि ज्ञान है। जिससे वस्तु का अर्थ प्रकाश होता है, वह बुद्धि है। यह बुद्धि ही आत्मा का विशेष गुण है। बुद्धि आदि संस्कारान्त आत्मा के विशेष गुण हैं। बुद्धि जीवात्मा में अनित्य और परमात्मा में नित्य है। बुद्धि दो प्रकार की है- स्मृति और अनुभव। बाह्य इन्द्रिय द्वारा अजन्य भावना संस्कार से उत्पन्न बुद्धि स्मृति है। स्मृति से भिन्न बुद्धि अनुभव है। यथार्थ और अयथार्थ के भेद से वह अनुभव भी दो प्रकार का है। तत्प्रकारक अनुभव यथार्थ है। अर्थात् जिसका जो प्रकार हैं, उसमें वही प्रकार गृहीत हो, ऐसा वह ज्ञान यथार्थ है। यथा घट का घटत्व प्रकार। उस घट में घत्व प्रकारत्व से गृहीत हो, वह यथार्थ अनुभव है। 'तदभाववति तत्प्रकारकः अनुभवः अयथार्थः'। अर्थात् जिसका जो प्रकार नहीं है, उसमें ही वह प्रकार गृहीत हो तो वह अनुभव अयथार्थ होता है। यथार्थ अनुभव प्रमा ही कहलाता है। अयथार्थानुभव

टिप्पणी

अप्रमा कहलाता है। वैशेषिक दर्शन में प्रत्यक्ष और अनुमिति दो प्रमा स्वीकृत हैं। यहाँ उपमिति इत्यादि का पृथक् प्रमात्व स्वीकार नहीं है, अनुमिति प्रमा के अन्तर्गत होने के कारण।

11.8.17 सुख

प्रीति सुख है। सभी जीवात्माओं के लिए अनुकूलत्व जानना चाहिए। और वह जीवात्मा का विशेष गुण है। जो इच्छा इत्तर इच्छा के अधीन नहीं है, उसका विषय सुख होता है। मिष्टान्न (मिठाई) की इच्छा होती है तो खरीदने हेतु धन की इच्छा होती है। यहाँ मिठाई की इच्छा पर धन की इच्छा अधीन है।

11.8.18 दु:ख

पीड़ा दु:ख है। सभी जीवात्माओं के लिए प्रतिकूलत्व जानना चाहिए। यह भी जीवात्मा का विशेष गुण है। जो द्वेष इतर द्वेष के अधीन नहीं है, उसका विषय दु:ख होता है।

11.8.19 इच्छा

इच्छा काम है। वह जीवात्मा और परमात्मा का विशेष गुण है। जीव की इच्छा अनित्य और ईश्वर की नित्य होती है।

11.8.20 द्वेष

क्रोध द्वेष है। वह जीवात्मा का विशेष गुण है।

11.8.21 प्रयत्न

प्रयत्न कृति है। वह आत्मा का विशेष गुण है। प्रयत्न के तीन प्रकार हैं- प्रवृत्ति, निवृत्ति और जीवनयोनि। बुद्धि आदि प्रयत्न के छः गुण मानस प्रत्यक्ष हैं।

11.8.22 धर्म

11.8.23 अधर्म

सुख, दु:ख के असाधारण कारण में यथाक्रम धर्म और अधर्म है। सुख का हेतु

धर्म और दुःख का हेतु अधर्म है। वेद तथा उसके अनुकूल शास्त्र विहित कर्म जन्य धर्म है, वेद आदि निषिद्ध कर्मजन्य अधर्म है। धर्म और अधर्म अनुमानगम्य (अथवा आगम गम्य) हैं, प्रत्यक्ष नहीं। जो भोगार्थ शरीर आदि जनक आत्मविशेष गुण है, वह धर्म और अधर्म है।

11.8.24 संस्कार

संस्कारव्यवहारसाधारणं कारणं संस्कार:। जिस कारण से 'संस्कार' शब्द का प्रयोग होता है, वह कारण संस्कार नामक गुण है। वह त्रिविध है- वेग, भावना और स्थितिस्थापक।

वेग- वेग क्रिया हेतु पृथिवी आदि चारों भूतों तथा मन में विद्यमान रहता है। अर्थात् मूर्तद्रव्यवृत्ति।

भावना - अपेक्षा, बुद्धि द्वारा जब अनुभव होता है, वह अनुभव आत्मा में संस्कार उत्पन्न करता है।

वह संस्कार भावना कहलाता है। यही भावना है तो स्मृति होती है, अन्यथा नहीं। भावना नामक संस्कार अनुभव से उत्पन्न स्मृति हेतु आत्मा मात्र में रहता है। अनुभव से उत्पन्न जो भावना संस्कार है वह उद्‌बोधक की सहायता से उद्‌बुद्ध होकर स्मृति को उत्पन्न करता है। सहकारी संस्कार के सदृश दर्शन आदि हैं। जैसे पूर्व में देवदत्त के साथ साक्षत्कार हुआ। वह देवदत्त विषयक अनुभव है। यह अनुभव अपेक्षा बुद्धि के कारण आत्मा में संस्कार को उत्पन्न करता है। उसके बाद देवदत्त के सदृश्य किसी पुरूष के दर्शन से देवदत्त विषयी स्मृति उत्पन्न होती है। देवदत्त सदृश पुरूष का दर्शन यहाँ उद्‌बोधक है।

स्थितिस्थापक- अन्यथा कृत का पुन: उसी अवस्था में स्थापन होना स्थिति स्थापक है। और वह कट आदि पृथिवी में रहता है। वृक्ष की शाखा आदि मोड़कर मुक्त कर दिये जाने पर पुन: पूर्व अवस्था में चली जाती है, स्थितिस्थापक गुण के कारण।

पाठगत प्रश्न 11.4

1. गुण का लक्षण क्या है?
2. वैशेषक मत में गुण कितने प्रकार के हैं?
3. रस कितने प्रकार का है?
4. स्पर्श कितने प्रकार का है?
5. गन्ध किस इन्द्रिय द्वारा ग्रहण होता है?
6. परिमाण कितने प्रकार का है?

7. संयोग कितने प्रकार का है?
8. उभयकर्मज विभाग का एक उदाहरण दें।
9. द्रवत्व कितने प्रकार का है?
10. स्नेह किस द्रव्य का गुण है?
11. शब्द किस न्याय से शब्दान्तर बनता है?
12. बुद्धि कितने प्रकार की है?
13. स्मृति क्या है?
14. अनुभव कितने प्रकार का है?
15. वैशेषिक दर्शन में प्रमा कितने प्रकार की है?
16. अनुभव क्या है?
17. प्रयत्न कितने प्रकार का है?
18. संस्कार कितने प्रकार का है?
19. वेग नामक संस्कार कहाँ रहता है?

11.9 कर्म

संयोग से भिन्न होने पर भी संयोग का असमवायिकारण कर्म है। संयोग भिन्न संयोग का असमवायिकारण कर्म है अथवा कर्मत्व जाति से युक्त कर्म है। कर्म द्रव्य मात्र में होता है। वह पाँच प्रकार का है- उत्क्षेपण, अपक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन। यहाँ यह पाँच प्रकार के कर्म, वही क्रिया है, कर्ता के द्वारा इप्सित कर्म नहीं। अथवा वेदान्त द्वार उक्त नित्य, नैमित्तिक आदि कर्म नहीं।

1. **उत्क्षेपण** - द्रव्य के उर्द्ध द्वारा संयोग का कारण जो कर्म है, वह उत्क्षेपण है।
2. **अपक्षेपण** - द्रव्य के अधोदेश द्वारा संयोग का कारण जो कर्म है, वह अपक्षेपण है।
3. **आकुञ्चन** - द्रव्य के सन्निकृष्ट संयोग का कारण जो कर्म है, वह आकुञ्चन है।
4. **प्रसारण** - द्रव्य के विप्रकृष्ट संयोग का कारण जो कर्म है, वह प्रसारण है।
5. **गमन** - पूर्वोक्त उत्क्षेपण आदि नियत दिक्-देश संयोग जनक कर्म है। गमन तो अनियत दिग्-देश संयोग जनक कर्म है। अर्थात् उत्क्षेपण आदि कर्म नियत से नियत

उर्द्ध आदि में दी गई स्थिति तथा देश के साथ द्रव्य के संयोग में हेतु होता है। किन्तु गमन में उस प्रकार का नियम नहीं है। गमन अनिर्दिष्ट दिशा में स्थिति, देश के साथ द्रव्य के संयोग में हेतु होता है। अतः भ्रमण आदि अन्य सभी कर्म गमन है।

टिप्पणी

11.10 सामान्य

'नित्यम् एकम् अनेकानुगतं सामान्यम्'। 'यह गाय है', इस अनुगत प्रत्यय के कारण गोत्व आदि धर्म सामान्य कहलाता है। सामान्य छिन्नों में भी अच्छिन्न है। अतः वह नित्य कहलाता है। वह भिन्न व्यक्तियों में भी एक अभिन्न है। एकाधिकों में युगमपत् होता है, वह अनेक में समवेत होकर रहता है, यह अर्थ है। और वह सामान्य स्वयं के आश्रय में समवाय सम्बन्ध से होता है। सामान्य पर और अपर भेद से दो प्रकार का है। जिन दोनों सामान्य का कोई भी समान अधिकरण होता है, उनका ही पर-अपर विचार प्रसारण होता है। पर अधिक देशवृत्ति है और सत्ता का न्यून देशवृत्ति है अर्थात् न्यून देश में रहता है। अतः एक से पर और अपर (अन्य) से अपर है। सामान्य में सामान्य नहीं रहता है, अनवस्था के प्रसन्न के कारण। सामान्य ही जाति भी कहलाता है। द्रव्य, गुण, कर्म इन तीनों को व्यक्ति भी कहा जाता है। जाति व्यक्ति में समवाय से होता है।

11.10.1 जातिबाधक

बाधक की अनुपस्थिति होने पर अनुगत धर्म जाति होता है। जहाँ बाधक विद्यमान है वहाँ अनुगत धर्म उपाधि हो। यथा अभावत्व। उसी प्रकार जातिबाधक छः हैं – व्यक्ति का भेद, तुल्यत्व, शंकर, अनवस्था, रूपहानि और असम्बन्ध। कारिका है–

> **''व्यक्तेरभेदस्तुल्यत्वं संकरोथानवस्थितिः।**
> **रूपहानिरसंबन्धो जाति बाधकसंग्रहः॥'' (किरणावली, उदयनाचार्य)**

11.11 विशेष

''नित्यद्रव्यवृत्तयः व्यावर्तकाः विशेषाः''। व्यावर्तक भेदक विशेष हैं। सावयव द्रव्यों से सावयव द्रव्य अवयव आदि भेद से भिन्न होते हैं। यथा घट घटान्तर से भिन्न होता है, उसके अवयव कपाल का भेद होने के कारण। किन्तु निरवयवों नित्य द्रव्यों से निरवयव नित्य द्रव्य कैसे भिन्न होता है। उसमें कहते है विशेष पदार्थ भेद द्वारा निरवयव, नित्य द्रव्य नित्यद्रव्यान्तर से भिन्न होता है। विशेष नित्य द्रव्य वृत्तियाँ हैं। पृथिवी आदि द्रव्य चतुष्ट्य के परमाणु नित्य हैं। आकाश आदि पञ्चक भी नित्य हैं। अतः पृथिवी आदि के परमाणुओं में आकाश आदि पाँच द्रव्यों में विशेष होते हैं। उसके द्वारा विशेष अनन्त हैं। और वह

विशेष पदार्थ भेद बुद्धि मात्र हेतु वैशेषिक दर्शन का विशेष है। प्रलय काल में पार्थिव, जलीय, तैजस, वायवीय परमाणु पृथिवीत्व आदि के भेद से भिन्न होते हैं। किन्तु समान जाति के पार्थिव परमाणुओं का परस्पर भेदक कोई धर्म नहीं रहता है। उससे उस भेद ज्ञान के लिए पार्थिक आदि परमाणुओं में व्यावर्तक धर्म 'विशेष' स्वीकार किया जाता है। शब्द समवायिकारणता अवच्छेदक द्वारा आकाश में विशेष स्वीकार किया जाता हैं और प्रलय काल में गुणों के लोप में दिक्-काल के भेद ज्ञान के लिए उनका भी विशेष स्वीकृत है। मुक्त अवस्था में आत्मा के भेद ज्ञानार्थ और आत्मा का स्वयं भी विशेष पदार्थ स्वीकृत है।

11.12 समवाय

'नित्य सम्बन्धः समवायः;। जो सम्बन्ध नित्य है, वह समवाय हैं। और वह सम्बन्ध अयुतसिद्ध पदार्थों में रहता है। जो मिश्रित हों, वे अयुतसिद्ध रूप में सिद्ध हैं। यथा तन्तु-पट मिलकर, तो दोनों भी सिद्ध हैं। यदि न मिलें तो तन्तु सिद्ध है, पट तो नष्ट हो जाता है। कहा गया है ''ययोः द्वयोः मध्ये एकम् अविनश्यद् अपराश्रितम् एव अवतिष्ठते तौ अयुतसिद्धौ''। अमिश्रणार्थक युधातु का क्त प्रत्यय में निष्पन्न युत शब्द असम्बद्ध का वाचक है। युतसिद्ध, असम्बद्ध भी सिद्ध है। असम्बद्धसिद्ध जो नहीं होता है वह अयुतसिद्ध है। अयुतसिद्ध अवयव-अवयवी, गुण-गुणी, क्रिया-क्रियावान, जाति-व्यक्ति और विशेष-नित्य द्रव्य, ये पाँच है। अतः अयुतसिद्धों का सम्बन्ध समवाय है। और इसके द्वारा समवाय का आश्रय जाना जाता है। समवाय एक भी उपाधि भेद से अनेक प्रकार का है। जो समवाय द्वारा विद्यमान होता है, उसे समवेत कहा जाता है। जिसमें समवाय द्वारा विद्यमान रहता है, वह समवायी कहलाता है।

11.13 संयोग-समवाय का भेद

क्र.सं.	संयोग	समवाय
1.	संयोग युतसिद्धों में ही होता है	समवाय अयुतसिद्धों में ही होता है
2.	संयोग गुण विशेष है	समवाय पदार्थ विशेष है, गुण नहीं
3.	संयोग अनित्य और बहुत प्रकार का है	समवाय नित्य और एक है
4.	संयोग सर्वदा वृत्तिनियामक नहीं होता है। संयोग के दोनों सम्बन्धी सर्वदा रूप आधार-आधेय रूप में प्रतीत नहीं होते हैं	समवाय सर्वदा वृत्ति नियामक होता है। समवाय के दोनों सम्बन्धी सर्वदा आधार-आधेय के में प्रतीत होते हैं।

5.	संयोग सर्वदा द्रव्यों के मध्य में होता है	समवाय सर्वदा द्रव्यों के मध्य में नहीं होता है। यथा द्रव्य-गुण घट-घटरूप का सम्बन्ध
6.	एक द्रव्य एकाधिक द्रव्यों में एककाल में संयोग द्वारा रह सकता है। यहाँ प्रत्येक द्रव्य संयोग भिन्न होता है।	समवाय का एक प्रतियोगी में एकाधिक अनुयोगियों में एक समय पर समवाय द्वारा रह सकता है। यहाँ एक का बहुत के साथ समवाय एक ही है।
7.	संयोग अव्याप्यवृत्ति है।	समवाय व्याप्यवृत्ति है।

11.14 अभाव

वैशेषिक दर्शन में पदार्थ दो प्रकार के हैं- भाव पदार्थ और अभाव पदार्थ। भाव द्रव्य आदि छः हैं। अभाव 'घट' नहीं है, 'पट' नहीं है, इत्यादि निषेध ज्ञान का विषय है। अभाव का कोई भी निर्दिष्ट लक्षण नहीं है। अभावत्व उपाधि जिसमें होती है, वह अभाव है, अथवा भाव से भिन्न अभाव है, ऐसा कह सकते हैं। अभाव स्वरूप सम्बन्ध से उसके अधिकरण में रहता है। जिसका अभाव है, वह प्रतियोगी कहलाता है। यथा भूतल पर घटाभाव है, यहाँ भूतल पर घट का अभाव स्वरूप रहता है। और घट घटाभाव का प्रतियोगी है।

अभाव दो प्रकार का है- संसर्गाभाव और अन्योन्याभाव। संसर्गाभाव पुनः तीन प्रकार का है- प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव और अत्यन्ताभाव। अतः सकल रूप में अभाव चार हैं।

1. **प्रागभाव**- 'अनादि सान्त प्रागभावः। कार्य की उत्पत्ति के प्राक् (पहले) जो अभाव होता है, वह प्रागभाव है। यथा किसी घट की उत्पत्ति के पूर्व उस घट का अभाव प्रागभाव है। और उस अभाव की उत्पत्ति नहीं है किन्तु अन्त है। घट की उत्पत्ति से पूर्व 'इह कपाले घटो भविष्यति' (यहाँ कपाल में घट होगा) ऐसी जो प्रतीति उत्पन्न होती है, उस प्रतीति के द्वारा विषयीकृत अभाव प्रागभाव होता है। यह प्रतियोगी का जनक है।

2. **प्रध्वंसाभाव**- ''सादि अनन्त प्रध्वंसः''। कार्य के विनाश के पश्चात् उस कार्य का जो अभाव उस अधिकरण में प्रतीत होता है, वह प्रध्वंसाभाव है। यथा दण्ड द्वारा घट के नाश होने के पश्चात् उस घट का अभाव प्रध्वंसाभाव है। प्रध्वंसाभाव की उत्पत्ति होती है किन्तु अन्त नहीं होता। यह अभाव 'घट ध्वस्त है' इस प्रतीति के द्वारा विषयीकृत होता है। यह अभाव प्रतियोगी जन्य है।

3. **अत्यन्ताभाव** - ''त्रैकालिकसंसर्गावच्छिन्नप्रतियोगिताकः अत्यन्ताभावः''। जो अभाव त्रैकालिक है अर्थात् नित्य है, वह अत्यन्ताभाव है। अतीत, वर्तमान और भविष्यत्,

तीन काल हैं। तीनों कालों में विद्यमान अत्यन्ताभाव है। यथा 'वायु में रूपाभाव'। और भी जहाँ कहीं भी भूतल आदि में घट आदि की अवर्तमानत्व दशा में 'इह भूतले घटो नास्ति', यह कारिका जो प्रतीति उत्पन्न करती है, उस प्रतीति के द्वारा विषयीकृत अभाव अत्यन्ताभाव कहलाता है।

4. **अन्योन्याभाव**- ''तादात्म्यसम्बन्धावच्छिन्नप्रतियोगिताक: अन्योन्याभाव:''। तादात्म्य सम्बन्ध द्वारा पदार्थ नहीं होगा तो उसके अभाव के प्रतियोगी में विद्यमान प्रतियोगिता तादात्म्य सम्बन्ध द्वारा अवच्छिन्न होती है। तादात्म्य सम्बन्ध अभेद सम्बन्ध है। 'घट: पट: न भवति', यहाँ घट में पट अभेद सम्बन्ध से नहीं होता है। अत: यह अन्योन्याभव है। वस्तुत: किसी भी पदार्थ का जो निषेध (अभाव) है, वह अन्योन्याभाव है। अर्थात् अभाव की प्रतियोगिता यदि तादात्म्य सम्बन्ध अवच्छिन्न होती है, तब उसके समान अभाव अन्योन्याभाव कहलाता है। 'घट पट नहीं होता', यहाँ घट में तादात्म्य से पट निषिद्ध है। उसके द्वारा पटाभाव प्रतियोगिता तादात्म्य सम्बन्ध अवच्छिन्न होती है। अत: यह अन्योन्याभाव है। यह अन्योन्याभाव भी नित्य है। सामान्यत: घट नहीं है, इस रूप में प्रकट होता है। अन्योन्याभाव भेद भी समाख्यात है।

पाठगत प्रश्न 11.5

1. कर्म का लक्षण क्या है?
2. कर्म कितने प्रकार का है?
3. गमन किस प्रकार का कर्म है?
4. अपक्षेपण क्या है?
5. प्रसारण क्या है?
6. सामान्य का लक्षण क्या है?
7. सामान्य किस सम्बन्ध से होता है?
8. सामान्य कितने प्रकार का है?
9. सत्ता किस प्रकार का सामान्य है?
10. सामान्य में कैसा सामान्य स्वीकार नहीं किया जाता?
11. जाति बाधक कितने प्रकार के हैं?
12. जाति बाधकों के नाम लिखिए?
13. आकाशत्व जाति कैसे नहीं है?

14. भूतत्व जाति कैसे नहीं है?
15. विशेष में विशेषत्व 'जाति स्वीकार करने में क्या दोष है?
16. समवाय में कैसे समवायत्व जाति स्वीकार नहीं किया जाता?
17. विशेष पदार्थ क्या है?
18. विशेष कहाँ रहते हैं?
19. पार्थिव आदि परमाणुओं में कैसे विशेष स्वीकृत हैं?
20. आकाश में कैसा विशेष स्वीकृत है?
21. आत्माओं में कैसे विशेष स्वीकृत है?
22. समवाय क्या है?
23. अयुतसिद्ध शब्द का अर्थ क्या है?
24. अयुतसिद्ध पदार्थ क्या है?
25. संयोग-समवाय के दो भेद लिखें।
26. प्रतियोगी क्या है?
27. अभाव कितने प्रकार का है?
28. प्रागभाव क्या है?
29. प्रध्वंसाभाव क्या है?
30. 'वायु में रूपाभाव है', यहाँ किस प्रकार का अभाव है?
31. 'घट पट नहीं होता', यहाँ किस प्रकार का अभाव है?
32. अन्योन्याभाव क्या है?

11.15 प्रमाण तत्व

वैशेषिक दर्शन में प्रमाण दो हैं- प्रत्यक्ष और अनुमान। वैशेषिक मत में 'सभी पदार्थों में सन्निकर्ष से जो ज्ञान उत्पन्न होता है, वह प्रत्यक्ष है। 'अक्षम् अक्षं प्रतीत्य यत् ज्ञानं जायते तत् प्रत्यक्षं वा'। अक्ष इन्द्रियाँ छः हैं- चक्षु, घ्राण, रसना, त्वक्, श्रोत्र और मन। और प्रत्यक्ष प्रमाण यहाँ इन्द्रिय है। प्रत्यक्ष सर्वज्ञीय और असर्वज्ञीय के भेद से दो प्रकार का है। असर्वज्ञीय प्रत्यक्ष पुनः दो प्रकार का है- सविकल्पक और निर्विकल्पक।

लिङ्ग दर्शन से होने वाला ज्ञान लैङ्गिक है। वह लैङ्गिक ज्ञान अनुमिति है। व्याप्ति विशिष्ट पक्षधर्म लिङ्ग है। और लिङ्ग अनुमापक है। भाष्य में उक्त है-

यदनुमेयेन सम्बद्धं प्रसिद्धं च तदन्विते।
तदभावे च नास्त्येव तल्लिङ्गमनुमानकम्॥

यहाँ 'यद', पद द्वारा हेतु अथवा लिङ्ग का बोध होता है, और 'तत्' पद द्वारा साध्य का। वैशेषिक मत में लिङ्ग का दर्शन ही अनुमान प्रमाण है। और वह अनुमान दो प्रकार का है - दृष्ट और सामान्यतो दृष्ट। प्रसिद्ध साध्यों के अत्यन्त जाति भेद में दृष्ट अनुमान है। यथा गाय में सास्नामात्र (गलकंबल) उपलब्ध होने पर देशान्तर में सास्नामात्र के दर्शन से गाय की प्रतिपत्ति होती है। प्रसिद्ध साध्यों के अत्यन्त जाति भेद में सामान्यतोदृष्ट अनुमान है। यथा किसान, वाणिक् आदि पुरूषों की प्रवृत्ति के लिए फलवत्व उपलब्ध होने रूप दृष्ट प्रयोजन को अनुद्देश्य करके प्रवर्तमान वर्ण श्रमिकों का भी फलानुमान किया जाना।

इस मत में शब्द का तथा उपमान का पृथक् प्रामाण्य नहीं है, उनका अनुमान में ही अन्तर्भाव सम्भव होने से। और भाषा परिच्छेद में उक्त है-

शब्दोपमानयोर्नैव पृथक् प्रामाण्यमिष्यते।
अनुमानगतार्थत्वादिति वैशेषिक मतम्॥

11.16 परमाणुवाद (चारों भूतों के उत्पत्ति नाश का क्रम)

वैशेषिक मत में पृथिवी, जल (आप), तेज (अग्नि) और वायु, इन चारों द्रव्यों के परमाणु नित्य हैं। उन परमाणुओं के द्वारा कार्यरूप स्थूल पृथिवी आदि उत्पन्न होते हैं। सृष्टि के प्रारम्भ में उनके परमाणु निष्क्रिय रहते हैं। और वे अतीन्द्रियाँ नित्य और अणुपरिमाण युक्त हैं। ईश्वर के ज्ञान से इच्छा, इच्छा से प्रयत्न (और) प्रयत्न से निष्क्रिय परमाणुओं में क्रिया उत्पन्न होती है। और वहाँ वे दो परमाणुओं का संयोग होने पर अनित्य, कार्यरूप अणु परिमाण द्वयणुक उत्पन्न होता है। तीन द्वयणुकों के संयोग होने पर त्रयणुक, चार त्रयणुकों द्वारा चतुरणुक होता है। और इसी क्रम से स्थूल से स्थूलतर पृथिवी आदि उत्पन्न होते हैं। और उससे महत् पृथिवी, महत् आप (जल), महत् तेज और महत् वायु होते हैं। त्रयणुक आदि सभी महत् परिमाण से युक्त है। और पुनः ईश्वर की इच्छा वश परमाणुओं में क्रिया उत्पन्न होती है। और उस क्रिया द्वारा दो परमाणुओं के संयोग-नाश से द्वयणुक नाश होता है। और उसके द्वारा त्रयणुक आदि के नाश के क्रम से महापृथिवी आदि का नाश होता है। प्राचीन मत में असवायिकारण के नाश से (परमाणुद्वय के संयोग नाश से) द्वयणुकनाश तथा समवायिकारण के नाश से (द्वयणुाकद्वय के नाश से) त्रयणुक नाश होता है। नवीन मत में तो सभी जगह ही असमवायिकारण के नाश से द्वयणुक आदि कार्यो का नाश होता है।

1. अतीन्द्रिय नित्य निष्क्रिय परमाणु
2. ईश्वर की इच्छा से परमाणुओं में क्रिया

3. दो परमाणुओं के संयोग से कार्यरूप, अनित्य द्वयणुक की उत्पत्ति
4. तीन द्वयणुकां के संयोग से त्रयणुक की उत्पत्ति
5. चार त्रयणुकों के संयोग से चतुरणुक की उत्पत्ति
6. इसी क्रम द्वारा महापृथिवी आदि की उत्पत्ति

पाठगत प्रश्न 11.6

1. वैशेषिक मत में प्रमाण कितने हैं?
2. वैशेषिक मत में प्रत्यक्ष का लक्षण क्या है?
3. इन्द्रियाँ कौन सी हैं?
4. लैङ्गिक ज्ञान क्या है?
5. वैशेषिक मत में अनुमान प्रमाण क्या है?
6. वैशेषिक मत में शब्द और अनुमान का कहाँ अन्तर्भाव होता है?
7. सृष्टि के पूर्व निष्क्रिय परमाणुओं में कैसे क्रिया उत्पन्न होती है?
8. द्वयणुक क्या है?
9. त्रयणुक का परिमाण क्या है?
10. एक चतुरणुक में कितने परमाणु रहते हैं?
11. द्वयणुक का नाश कैसे होता है?

पाठसार

कणाद प्रणीत वैशेषिक सूत्र वैशेषिक दर्शन का प्रामाणिक ग्रन्थ है। विशेष पदार्थ को स्वीकार करने से इसकी अभिधा वैशेषिक है। वैशेषिक मत में पदार्थ सात द्रव्य आदि हैं। नौ द्रव्यों में आत्मा अन्यतम है। और वह आत्मा दो प्रकार की है - जीवात्मा और परमात्मा। परमात्मा सर्वज्ञ ईश्वर है। वैशेषिक दर्शन में दो प्रमाण स्वीकृत हैं- प्रत्यक्ष और अनुमान। उपमान्-शब्द का ग्रहण यहाँ अनुमान में ही होता है। असत्कार्यवाद, मोक्षस्वरूप इत्यादि सिद्धान्तों में उन दोनों दर्शनों का सादृश्य दिखता है। परमाणुवाद वैशेषिक सम्प्रदाय का अन्यतम विशेष सिद्धान्त है।

टिप्पणी

पाठान्त प्रश्न

1. वैशेषिक दर्शन कैसे न्याय के समान तन्त्र है?
2. वैशेषिक दर्शन के नामकरण में किसकी मुख्य भूमिका है?
3. वैशेषिक दर्शन के सूत्रग्रन्थ का परिचय दें।
4. वैशेषिक मत में पदार्थों का उद्देश करें।
5. वैशेषिक मत में द्रव्य का परिचय दें।
6. वैशेषिक मत में पृथिवी का परिचय दें।
7. वैशेषिक मत में जल का परिचय दें।
8. वैशेषिक मत में तेज का परिचय दें।
9. वैशेषिक मत में वायु का परिचय दें।
10. वैशेषिक मत में आकाश का परिचय दें।
11. वैशेषिक मत में दिशा का परिचय दें।
12. वैशेषिक मत में आत्मा का परिचय दें।
13. वैशेषिक मत में मन का परिचय दें।
14. वैशेषिक मत में पृथिवी का परिचय दें।
15. वैशेषिक मत में परिमाण का परिचय दें।
16. वैशेषिक मत में संयोग का परिचय दें।
17. वैशेषिक मत में शब्द का परिचय दें।
18. वैशेषिक मत में बुद्धि को प्रतिपादित करें।
19. वैशेषिक मत में संस्कारों को परिचित कराएँ।
20. वैशेषिक मत में कर्मों को प्रतिपादित करें।
21. वैशेषिक मत में सामान्य को विशदीकृत करें।
22. वैशेषिक को अवलम्बित कर प्रबन्ध लिखें।
23. वैशेषिक मत में समवाय का परिचय दें।
24. संयोग और समवाय का भेद वर्णित करें।

25. वैशेषिक मत में अभाव का प्रतिपादन करें।
26. वैशेषिक मत में स्वीकृत प्रमाणों का परिचय दें।
27. वैशेषिक मत में सृष्टि-प्रलय के क्रम का उपपादन करें।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

उत्तर-11.1

1. वैशेषिक दर्शन के प्रवक्ता महर्षि कणाद् हैं।
2. वैशेषिक पदार्थ और परमाणुवाद वैशेषिक दर्शन का विशेषत्व है।
3. महर्षि कणाद् के अपर दो नाम कणभूक् और कणभक्ष हैं।
4. वैशेषिक दर्शन न्याय दर्शन के समान तन्त्र है।
5. दोनों ही असत्कार्यवादी है, यह न्याय-वैशेषिक दर्शन का एक सादृश्य है।
6. न्याय दर्शन में चार प्रमाण हैं, वैशेषिक दर्शन में दो प्रमाण हैं, यह न्याय वैशेषिक दर्शनों का एक वैशादृश्य है।
7. इस दर्शन में विशेष पदार्थ को स्वीकार करने से वैशेषिक नाम होता है।
8. वैशेषिक सूत्र का उद्भव छठी शताब्दी ईसापूर्व में हुआ।
9. वैशेषिक सूत्र में दस अध्याय हैं।
10. तत्व ज्ञान द्वारा मुक्ति वैशेषिक शास्त्र का मूल उद्देश्य है।

उत्तर-11.2

1. प्रशस्तपाद द्वारा रचित ग्रन्थ पदार्थधर्मसंग्रह है।
2. व्योमवती व्योमशिवाचार्य की रचना है।
3. किरणावली उदयनाचार्य द्वारा विरचित है।
4. श्रीधरभट्ट ने न्यायकन्दली को रचा।
5. उपस्कारग्रन्थ शंकरमिश्र द्वारा विरचित है।
6. पद्मनाभमिश्र सेतुटीका के टीकाकार हैं।
7. विश्वनाथ आचार्य द्वारा रचित ग्रन्थ भाषापरिच्छेद है।
8. अन्नम्भट्ट द्वारा प्रणीत ग्रन्थ तर्कसंग्रह है।

टिप्पणी

9. वल्लभाचार्य की रचना न्यायलीलावती है।
10. केशवमिश्र तर्कभाषा ग्रन्थ के प्रणेता है।

उत्तर-11.3

1. वैशेषक दर्शन में सात पदार्थ स्वीकृत हैं।
2. द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव वैशेषिक दर्शन के सात पदार्थ हैं।
3. 'क्रियागुणवत् समवायिकारणं द्रव्यम्', यह द्रव्य का लक्षण है।
4. भावकार्य मात्र का समवायिकारण द्रव्य है।
5. नौ द्रव्य हैं। और वे हैं- पृथिवी, आप (जल), तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मन है।
6. पृथिवी का विशेष गुण गन्ध है।
7. पाक शब्द का अर्थ तेजः संयोग है।
8. पृथिवी के सामान्य गुण संख्या आदि दस हैं।
9. आप (जल) में शीतस्पर्श विद्यमान है।
10. तेज में उष्णस्पर्श विद्यमान है।
11. तेज चार प्रकार का है।
12. आकरज तेज का उदाहरण है- स्वर्ण।
13. चक्षु तैजस इन्द्रिय है।
14. वायु अरूपस्पर्शवान् है।
15. शरीरान्तः सञ्चारी वायु प्राण है।
16. उपाधि भेद से वायु पाँच प्रकार का है।
17. परमाणु रूप वायु नित्य है।
18. आकाश का विशेष गुण शब्द है।
19. आकाश नित्य, एक और विभु है।
20. शब्द के आश्रयत्व से परिशेषानुमान के कारण आकाश की सिद्धि होती है।
21. काल जगत का आधार है।

22. संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग और विभाग काल के सामान्य गुण हैं।
23. काल कार्यमात्र का निमित्त कारण होता है।
24. दिक् विभु परिमाण है।
25. ज्ञान का अधिकरण आत्मा है।
26. आत्मा दो प्रकार की है– जीवात्मा और परमात्मा।
27. नित्य ज्ञान परमात्मा का गुण है।
28. बुद्धि, सुख, दु:ख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म और संस्कार जीवात्मा के विशेष गुण है।
29. सुख आदि की उपलब्धि का साधनभूत इन्द्रिय मन है।
30. मन अणु परिमाण है।
31. सुषुप्ति काल में मन पूरीतत् नाड़ी में प्रवेश करता है।

उत्तर-11.4

1. द्रव्य, कर्म से भिन्न होने पर भी सामान्यवान् गुण है।
2. वैशेषिक मत में चौबीस गुण हैं।
3. रस छ: प्रकार के हैं। मधुर, अम्ल, लवण, कटु, कषाय और तिक्त है।
4. स्पर्श तीन प्रकार का है। शीत, ऊष्ण और अनुष्णाशीत।
5. गन्ध घ्राण इन्द्रिय द्वारा ग्रहण होता है।
6. परिमाण चार प्रकार का है- अणु, महत् ह्रस्व और दीर्घ।
7. संयोग तीन प्रकार का है- अन्यतर, कर्मज, उभयकर्मज और संयोगज।
8. सक्रिय मल्लों का विभाग उभयकर्मज विभाग का उदाहरण है।
9. द्रवत्व दो प्रकार का है- सांसिद्धिक और नैमित्तिक।
10. स्नेह जल का गुण हैं
11. शब्द वीचीतरंग न्याय अथवा कदम्बकोरक न्याय द्वारा शब्दान्तर में बदलता है।
12. बुद्धि दो प्रकार की है- स्मृति और अनुभव।
13. केवल भावना नामक संस्कार से उत्पन्न ज्ञान स्मृति है।
14. अनुभव दो प्रकार का है- यथार्थ और अयथार्थ।

टिप्पणी

15. वैशेषिक दर्शन में प्रमा दो प्रकार की है- प्रत्यक्ष और अनुमिति।
16. स्मृति से भिन्न ज्ञान अनुभव है।
17. प्रयत्न तीन प्रकार का है- प्रवृत्ति, निवृत्ति और जीवनयोनि।
18. संस्कार तीन प्रकार का है- भावना, वेग और स्थितिस्थापक।
19. पृथिवी आदि चार भूतों में तथा मन में वेग नामक संस्कार रहता है।

उत्तर-11.5

1. जो संयोग से भिन्न है किन्तु संयोग का असमवायिकारण है वह कर्म है अथवा कर्मत्व जाति से युक्त है।
2. कर्म पाँच प्रकार का है। उत्क्षेपण, अपक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन।
3. गमन अनियत दिग्देश का जनक है। यथा भ्रमण आदि।
4. द्रव्य के अधोदेश संयोग का कारण अपक्षेपण है।
5. द्रव्य के विप्रकृष्ट संयोग का कारण प्रसारण है।
6. नित्य एक और अनेक में रहने वाला सामान्य है।
7. सामान्य स्वयं के आश्रय में समवाय सम्बन्ध से रहता है।
8. सामान्य दो प्रकार का है- पर और अपर।
9. सत्ता पर सामान्य है।
10. अनवस्था दोष से सामान्य में सामान्य स्वीकार नहीं होता है।
11. जातिबाधक छः प्रकार के हैं।
12. व्यक्ति का अभेद, तुल्यत्व, संकर, अनवस्था, रूपहानि, और असम्बन्ध जातिबाधक है।
13. आपने आश्रय आकाश के अभिन्न होने के कारण आकाशत्व जाति नहीं है।
14. संकर जातिबाधक के होने के कारण भूतत्व जाति नहीं है।
15. विशेष में विशेषत्व जाति स्वीकार करने पर स्वतोव्यावर्तकत्व धर्म की हानि होगी।
16. असम्बन्ध के कारण समवाय में समवायत्व जाति स्वीकार नहीं की जाती है।
17. नित्य द्रव्य वृत्तियाँ व्यावर्तक विशेष है।
18. पृथिवी आदि चारों भूतों के परमाणुओं में, और नित्य आकाश आदि पाँच द्रव्यों में विशेष रहते हैं।

19. प्रलयकाल में समान जाती पार्थिव परमाणुओं के भेदकत्व से उसमें विशेष स्वीकृत हैं।
20. शब्द की समवायिकारणता के अवच्छेदकता द्वारा आकाश में विशेष स्वीकृत है।
21. मुक्त अवस्था में आत्मा के भेद-ज्ञान के लिए आत्मा में विशेष स्वीकृत हैं।
22. समवाय नित्य सम्बन्ध है, वह अयुतसिद्धवृत्ति है।
23. जिन दोनों के मध्य में एक अविनाशी, अपराश्रित होने तक ही रहता है, वे अयुतसिद्ध हैं।
24. अवयव-अवयवी, गुण-गुणी, क्रिया-क्रियावान, जाति-व्यक्ति और विशेष-नित्यद्रव्य अयुतसिद्ध पदार्थ हैं।
25. संयोग अनित्य गुण विशेष है, समवाय नित्य पदार्थ विशेष हैं, संयोग-समवाय का भेद है।
26. जिसका अभाव है, वह प्रतियोगी है। यथा घटाभाव का घट प्रतियोगी है।
27. अभाव दो प्रकार का है- संसर्गाभाव और अन्योन्याभाव। संसर्गाभाव तीन प्रकार का है- प्रागभाव, ध्वंसाभाव और अत्यन्ताभाव।
28. उत्पत्ति के पहले कार्य का जो अभाव होता है, वह प्रागभाव है। उसकी उत्पत्ति नहीं होती है किन्तु विनाश होता है।
29. कार्य के विनाश के पश्चात् उसके कार्य का जो अभाव होता है, वह उस अधि करण में होता है, वह ध्वंसाभाव है। ध्वंसाभाव की उत्पत्ति होती है किन्तु नाश नहीं होता है।
30. 'वायु में रूपाभाव है', यहाँ अत्यन्ताभाव है।
31. 'घट पट नहीं होता है', यहाँ अन्योन्याभाव है।
32. तादात्म्य सम्बन्ध अवच्छिन्न अभाव अन्योन्याभाव है।

उत्तर-11.6

1. वैशेषिक मत में प्रमाण दो हैं- प्रत्यक्ष और अनुमान।
2. वैशेषिक मत में सभी पदार्थों में चतुष्ट्य के सन्निकर्ष से अव्यपदिष्ट जो ज्ञान उत्पन्न होता है, वह प्रत्यक्ष है।
3. चक्षु, घ्राण, रसना, त्वक्, श्रोत्र और मन ये छः इन्द्रियाँ हैं।
4. लिङ्ग दर्शन से सञ्जायमान ज्ञान लिङ्गक है। और लिङ्ग अनुमापक है।
5. वैशेषिक मत में लिङ्ग दर्शन अनुमान प्रमाण है।

6. वैशेषिक मत में शब्द और उपमान का अनुमान प्रमाण में अन्तर्भाव होता है।
7. सृष्टि के प्राक् (पहले) निष्क्रिय परमाणुओं में ईश्वर की इच्छा के कारण क्रिया उत्पन्न होती है।
8. दो परमाणुओं के संयोग से अनित्य कार्यरूप अणु परिमाण द्वयणुक उत्पन्न होता है।
9. त्रयणुक महत् परिमाण है।
10. एक चतुरणुक में चौबीस परमाणु रहते हैं।
11. दो परमाणुओं के संयोग के नाश से द्वयणुक नाश होता है।

।ग्यारहवाँ पाठ समाप्त।।